प्रकृति ही पुरुष है ?

[वेदान्त अथवा वेदान्तोष्टि]

जब मनुष्य संसार में जन्म लेकर आता है तो वह अपने इर्द-गिर्द अनेक प्रकार के अद्भुत जड़ तथा चेतन जगत् को देखता है। उस जड़ तथा चेतन जगत् में विचर रहे जीवों के अनेक प्रकार के अच्छे-बुरे कर्मों को भी देखता है। जीवों के कर्मों की विचित्रता के साथ-साथ सृष्टि की अनेक प्रकार की रचनाएं, जैसे कि ऊँचे-ऊँचे पहाड़, बहती हुई नदियां, नीला-नीला आकाश, दूर तक फैला हुआ विशाल समुद्र, और यह दूर तक फैली हुई पृथिवी भी उसे दृष्टिगोचर होती है। बिना तेल के दीपक के समान जलने वाले जुगनू, सूर्य चन्द्रमा आदि को भी देखता है। इस विचित्र वस्तुओं से युक्त स्थान को देखकर वह बरबस ही कह उठता है कि आखिर यह सब क्या है ? साथियों, अड़ोसी-पड़ोसियों तथा मित्रों से उत्तर मिलता है कि यह संसार है, यह प्रकृति है; क्योंकि आम भाषा में लोग संसार को 'प्रकृत्ति' भी कहते हैं परन्तु संसार प्रकृति नहीं, अपितु सृष्टि है। दार्शनिक भाषा में संसार बनने से पूर्व, जब कुछ नहीं बना था परमाणु ही परमाणु थे; उस अवस्था को ही प्रकृति कहते हैं। और सृष्टि कहते हैं उस अवस्था को; जबकि प्रकृति के परमाणु परमात्मा द्वारा आपस में मिलकर इकट्ठे होकर सृष्टि अर्थात् जगत् का रूप धारण कर लेते हैं।

अजनबी फिर पूछता है; क्यों भाई! कोई दुःखी कोई सुखी, कोई पशु, कोई मनुष्य, कोई गरीबी में सड़ रहा है तो कोई गद्दों पर पल रहा है, कहीं डाकुओं द्वारा मनुष्यों का कतल होता है तो कहीं बेचारी गौ आदि पशु जाति पर राक्षसों की तलवार चलती है; यह सब क्यों है ? सुनने वाला कहता है भैया! यह सब उसी की माया है। किसकी माया है ? उसी प्यारे प्रभु की माया है। वही ब्रह्म सब जगह समाया है। क्या यह मनुष्य का अत्याचार नहीं, जो गरीबों और बेजुबानों पर जुल्म ढाते हैं, उन्हें सताते हैं, काम अधिक लेते हैं पर रोजी-रोटी कम देते हैं ?

Scanned with CamScanner

नहीं भाई ! कौन किस पर अत्याचार करता है। यह सब परमात्मा का खेल है। एक व्याभिचारी एक औरत का शील भंग कर देता है, एक बदमाश राह चल रहे आदमी को रोककर चाकू की नोंक पर धन भी छीन लेता है और जान भी ले लेता है, चोर घर में घुसकर किसी परिश्रमी का धन लूट लेता है; क्या यह सब उसी परमात्मा की माया है ? हां, मेरे भाई विश्वास करो, यह सब ईश्वर का ही खेल है। तुम भी ईश्वर, मैं भी ईश्वर; यह सारी दुनियां ईश्वर ही ईश्वर है। ईश्वर से भिन्न और कुछ नहीं। ईश्वर इतना महान् है, उसका रूप इतना विशाल है कि हम और आप उसके खेल को समझ ही नहीं पाते। वास्तव में न तो कोई किसी को सताता है, न मारता है, न लूटता है, न पीटता है, यह सब जब ब्रह्म ही ब्रह्म है तो किसी का किसी को पीटना क्या और मारना क्या ? बुरा क्या और अच्छा क्या ? गौ भी ब्रह्म है और घर भी ब्रह्म, अन्न भी ब्रह्म और धन भी ब्रह्म। यह सारी दिखाई देने वाली प्रकृति पुरुष ही है। पूर्ण पुरुष को छोड़कर और कुछ नहीं है। और जब उस पूर्णपुरुष को छोड़कर दूसरा कुछ है ही नहीं तो किसी पर अत्याचार करने की बात ही पैदा नहीं होती, यदि तुम भी इसी प्रकार विचारने लगो तो तुम्हारी भी सारी चिन्तायें दूर हो जायेंगी। यही जीवन का सार है। इसे ही 'वेदान्त' कहते हैं।

वेदान्ती—मित्रवर। आपका यह प्रकृति ही को पुरुष माननेवाला वेदान्त सिद्धान्त तो बड़ा ही लुभावना और सारी चिन्ताओं को समाप्त कर देने वाला लगता है। परन्तु आपकी बातें सुनकर मेरे हृदय में कुछ प्रश्न चोट करने लगे हैं। क्या आप उन्हें सुनकर मेरे हृदय को शान्त कर सकते हैं ? क्यों नहीं भैया। तो सुनिये—यदि आपके विचार के अनुसार सब ब्रह्म ही ब्रह्म अर्थात् सारी प्रकृति ही पुरुष है, तो कातिल भी ब्रह्म है और चोर भी ब्रह्म है। एक कातिल जब किसी गाय को काटता है तो क्या ब्रह्म ही ब्रह्म को काटता है ? नहीं, ब्रह्म कटनेवाली चीज नहीं, वह कट ही नहीं सकता। आप कहते हैं कट नहीं सकता परन्तु उस पशु का गला स्पष्ट कटता दिखाई देता है। इतना ही नहीं; एक स्त्री का व्याभिचारी के हाथों से छुटकारा पाने के लिये रोना-चिल्लाना सुनाई देता है, लाखों शोषकों द्वारा गरीबों का शोषण एक समस्या बन गई है। तुम तो एक कटने की बात से इनकार करना चाहते हो पर ये

Scanned with CamScanner

हजारों समस्याएं चिल्ला-चिल्लाकर अत्याचार और अन्याय की खुली निन्दा कर रही हैं। यदि आपका ब्रह्म ऐसा विचित्र ही है, तो हमें आपके इस ब्रह्म पर ही शंका है। जिस ब्रह्म को आप लोग सर्वज्ञानी, दयालु, पवित्र, न्यायकारी और सबको सुख शान्ति तथा आनन्द देनेवाला कहते हो, वह यह ब्रह्म नहीं हो सकता। आखिर सच्चिदानन्द ब्रह्म को इस झमेले में पडने की आवश्यकता ही क्या थी? क्या इन सब लोकप्रसिद्ध बुराईयों को ही करना उसका परम धर्म है? कुमारियों से मनुष्य रूप में बलात् शील भंग करने वाला घोर व्याभिचारी तो हो सकता है पर ज्ञानी नहीं, गौ आदि पशुओं का कातिलों के रूप में खून बहानेवाला घोर निर्दयी तो हो सकता है पर दयालु नहीं, दुष्ट व्यापारियों के रूप में खाने-पीने की चीजों में मिलावट करने वाला पापी तो हो सकता है पर पवित्र नहीं। चाकू-छुरे की नोंक पर दूसरे के परिश्रम से कमाये गये धन का हरण करके चोर तो हो सकता है पर दाता तथा दानी नहीं। रिश्वत लेकर झूठे मुकदमें को जिताने तथा सत्यवादी को हराने से अन्यायकारी तो हो सकता है पर इनसाफ पसंद न्यायकारी नहीं।

सर्वज्ञानी, पवित्र, न्यायकारी तथा शान्ति का सागर होना तो दूर की बात है, मेरी दृष्टि में तो यह आपका पुरुष ब्रह्म न होकर कोई परले दर्जे का मूर्ख, चोर, कातिल, डकैत, व्यभिचारी तथा राक्षस के समान दूसरों को दुःखी करने वाला महा मक्कार है। और जो इन दुर्गुणों से युक्त है वह ईश्वर शीघ्र ही छोड़ देने योग्य है कि जिसके संग से हम में भी इन पापों का प्रवेश होकर कभी यह बचा-खुचा जीवन भी नष्ट न हो जाये। बन्धुवर, आप तो बड़े भोले-भाले और सज्जन दिखाई देते थे, परन्तु आपने तो मेरी एक भी बात समझे बिना केवल तर्क ही करना शुरु कर दिया। याद रखो तर्क से ही सब कुछ समझ में नहीं आ सकता और इस तर्क से तो आप में केवल दूसरों की बुराई ही आयेगी। इसलिए श्रद्धा और विश्वास रखिये तथा यह भी आपको नहीं भूलना चाहिये कि तर्क तो एक वेश्या के समान है; जिसका ऊपर का रूप तो बड़ा लुभावना पर अन्दर सिवाय समय और जीवन नष्ट करने के और कोई गुण नहीं। इसलिए मैं पहले ही आपको कह चुका हूं कि यह सब प्रकृति ईश्वर है तो किससे किसका पाप अथवा नाश। अर्थात् जो कुछ आप देख रहे हैं वह सब कुछ ठीक है, धर्म है, और पुण्य है।

Scanned with CamScanner

वेदान्ती—देखो भाई ! आप तो मेरी जिज्ञासा को बिना समझे, बिना विचारे ही मुझ पर बरस पड़े । जो आप 'तर्क' को वेश्या के समान बताते हैं. सो मुझे स्वीकार नहीं क्योंकि तर्क शब्द का अर्थ है किसी सिद्धान्त अथवा वस्तु तत्त्व की खोज के लिए शंका करना और विचार विमर्श के द्वारा उसकी असलियत का पता लगाना । क्या आप यह चाहते हैं कि हम संसार में आंख और मुंह बन्द करके चलते रहें और जैसा कोई कुछ कहता रहे वैसे ही मूर्ख बनकर मानते चलें । क्या आप नहीं चाहते कि आपको कोई धोखा न दे और झूठे जाल में न फंसाये । जब आप स्वयं यह कहते हैं कि प्रकृति ही पुरुष है अर्थात् सब भगवान् ही भगवान् है, इसलिए जो हो रहा है सब ठीक हो रहा है, किसी को पाप नहीं लगता । क्या यह समझना तर्क (विचार) करना नहीं है ? यदि कोई व्यक्ति आपके समक्ष किसी गधी को खड़ा करके यह कहे कि मित्रवर! लीजिए जरसी गाय । आपके विशेष अनुराध पर ढूंढकर लाया हूं तो क्या आप आंख के अन्धे और गांठ के पूरे होकर उस गधी को गाय, चांदी को सोना, स्त्री को पुरुष, मूर्ख को विद्वान्, कागज के बण्डल को करंसी नोट तथा पड़ोसी के पिता के चित्र को अपने पिता का चित्र स्वीकार कर लेंगे ? क्या आप जांच-पड़ताल नहीं करेंगे कि जरसी गाय की तो ऐसी शक्ल नहीं होती, उसके तो थन लम्बे होते हैं, उसके गले में तो झालर होती है, आदि-आदि ।

सिद्धान्ती—हां भाई! यह तो हम अवश्य ही देखेंगे और जांच-पड़ताल भी करेंगे । कौन मूर्ख ऐसा होगा जो पांच हजार रुपये खर्च करके जरसी गाय के स्थान पर किसी गधी को खरीद लेगा । पांच हजार की चीज की तो बात क्या; यदि पच्चीस पैसे की पेंसिल की जगह ही कोई हमें तिनका देने लगे तो हम तो क्या एक अनजान से अनजान व्यक्ति छोटे से छोटा बच्चा भी न लेगा । आप ठीक कहते हैं कि केवल किसी के कहने मात्र से कोई भी मूर्ख से मूर्ख आदमी गधी को गाय, औरत को आदमी और कागजों को करंसी नोट कभी नहीं मान सकता ।

वेदान्ती तो मित्रवर! जिस विचार से आपने गधी को गाय नहीं माना । जिस कसौटी से चांदी को सोना तथा कागजों के गट्ठर को नोटों का बण्डल नहीं समझा, उसी विचार शक्ति को ही 'तर्क विद्या' कहते हैं ।

Scanned with CamScanner

इसलिए ग्रापका तर्क को 'वेश्या' कहना सरासर दिन को रात कहकर अपने ग्रापको अज्ञानी सिद्ध करना ही है। इसके साथ ही यह भी बड़ी विचित्र बात है कि जिस विचार शक्ति अर्थात् तर्क विद्या से ग्राप लोगों के विचारों तथा सिद्धान्तों को गलत सिद्ध करके अपना सिद्धान्त लागू करते हैं परन्तु हम भी जब उसी विचार प्रवाह तर्क-विद्या से ग्राप लोगों के बड़े लुभावने जो कि ऊपर से सोने के समान चमकीले पर वास्तव में पीतल से; सिद्धांतों की पोल खोलने लगते हैं तो ग्राप तिलमिलाने लगते हैं और इतना ही नहीं, बड़े ग्राश्चर्य की बात है कि एक तरफ तो ग्राप इस विचारशक्ति को वेश्या कहते हैं पर दूसरी ग्रोर ग्राप ग्रपने मत को चलाने के लिए एक मां की तरह इसकी सहायता ले रहे हैं। ग्ररे भाई! बड़े समझदार बनते हो। यह बात ध्यान रखना कि विचार शक्ति और तर्क विद्या को वेश्या कहने से हमें तो कोई फर्क नहीं पड़ता; क्योंकि हम तो उसे वेश्या मानते ही नहीं परन्तु ग्राप पर ग्रवश्य ही यह प्रभाव पड़ेगा क्योंकि ग्राप जिसको वेश्या कहते हैं उसी से ही मां के समान सहायता लेने से वेश्या के बेटे ही सिद्ध होने लगते हैं। मेरे विचार में वैसे ग्राप वेश्या के बेटे नहीं।

सिद्धांती इसलिये बन्धुवर! सब ब्रह्म ही है, इतनी बात कहकर ग्राप सचाई से पीछा नहीं छुड़ा सकते। मैं ग्रापसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या ईश्वर एक है वा ग्रनेक? हां, ईश्वर एक है। यदि ईश्वर एक है तो तुममें भी वही पूर्ण पुरुष परमेश्वर विद्यमान होकर कार्य कर रहा है और मुझ में भी अर्थात् सम्पूर्ण जगत् में जितने भी प्राणी कार्य कर रहे हैं उन सब में ब्रह्म पुरुष है इस प्रकार से तो ब्रह्म पुरुष एक न होकर ग्रनेक सिद्ध होते हैं। नहीं भाई, ग्रनेकों में होता हुग्रा भी एक ही है। यह बात समझ में नहीं ग्राती क्योंकि जिस समय एक ग्रादमी मरता है, उस समय दूसरा नहीं मरता। जिस समय मुझे भूख लगती है, उस समय ग्रापको नहीं लगती, जो बात मेरी समझ में ठीक-ठीक ग्राती है, वह ग्रापकी समझ में बिल्कुल नहीं ग्राती। यदि ब्रह्माण्ड के सारे प्राणियों के ग्रनेक शरीरों की चेतना का कारण वह एक ही व्यापक ब्रह्म होता तो ऐसा कदापि नहीं हो सकता था। तब तो एक के मरने पर सब मरते, एक के प्रसन्न होने पर सब प्रसन्न होते और एक के ग्रप्रसन्न होने पर सब ग्रप्रसन्न होते। ग्रतः यह सिद्ध हुग्रा कि सब

Scanned with CamScanner

संसार के प्राणियों के शरीरों में उनको चलाने वाले भिन्न-भिन्न आत्मा है।

तोता जी—देखिये मित्रवर ! ईश्वर अनेक होता हुआ भी एक है क्योंकि सब आत्मा उसी परमात्मा परब्रह्म पूर्ण पुरुष के ही अंश हैं। सि०—भाई साहब यह भी आपकी बात मानने के योग्य नहीं। क्योंकि मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि उस पूर्ण पुरुष के टुकड़े होते हैं या नहीं ? देखिये मित्रवर उस पूर्ण पुरुष के टुकड़े नहीं होते ! वह तो सदा एक रस अपरिणामी (न टूटनेवाला) एक जैसा विद्यमान रहता है। भाई ! यह तो आपको केवल कहने मात्र की बात है। जिस ब्रह्म पुरुष की आप व्याख्या कर रहे हैं. वह तो बिना टूटे-फूटे रह ही नहीं सकता। क्योंकि अभी आप कह रहे थे कि सब आत्मा उस परमात्मा पुरुष के हो अंश हैं और अंश अर्थात् टुकड़े बिना टूटे होते नहीं। साथ ही टुकडे कहना भी गुमराह करने वाली बात है, यदि हम आत्मा उसी के टुकड़े होते तो जो जिस का टुकड़ा होता है उसमें उसी का गुण होता है। सोने का टुकड़ा सोने जैसा ही गुण वा मूल्य रखेगा। परन्तु हमारे अन्दर परमात्मा के गुण नहीं। वो सदा आनन्द में रहे और हम दुःख में। वो सब कुछ जानता है, हम बहुत कम जानते हैं। सो दूसरा दोष तुम्हारे सारी प्रकृत्ति ही पुरुष है. के सिद्धान्त में यह आ खड़ा होता है। तो०—नहीं महाशय जी ! ईश्वर के हम अंश नहीं, मैं तो भूल से कह गया था, हम तो परमात्मा के प्रतिबिम्ब हैं। जैसे सूर्य को बारह बजे दोपहर के समय जब किसी ऊंचे स्थान पर चढ़कर देखें तो आप देखेंगे कि एक ही सूर्य अनेक जल के रखे बर्तनों में अनेकों की संख्या में दिखाई देता है। इसलिये हम सब ब्रह्म हैं।

सि०— वाह भाई साहब, अबकी बार तो बड़ा जबरदस्त उदाहरण खोज कर लाये। परन्तु मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि जब संसार में आपके मत के अनुसार प्रकृत्ति ही पुरुष है और पुरुष ही प्रकृत्ति है अर्थात् परमात्मा को छोड़कर दूसरी कोई चीज ही नहीं है तो ब्रह्म की छाया किसमें पड़ी और किसने देखी ? इससे आपका यह उदाहरण ही धराशायी होता है। सूर्य वाले उदाहरण में तीन पदार्थ हैं. एक सूर्य दूसरा वह पात्र जिनमें सूर्य के प्रतिबिम्ब दीखते हैं, तीसरा उन प्रतिबिम्बों को देखने वाला। अतः वैचारिक खोज करने से सिद्ध होता है कि संसार

में केवल ब्रह्म ही ब्रह्म अथवा पुरुष ही पुरुष मानने वालों का सिद्धान्त आकाश का वह फूल है जो कभी भी किसी के द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सका अर्थात् नहीं देखा जा सका। ठीक इसी प्रकार से आपके वार्त्तालाप में शब्दजाल तो है पर वस्तु तत्त्व (चीज) कुछ भी नहीं।

ब्रह्म ही ब्रह्म माननेवाला यह कहता है कि मुझ में भी ब्रह्म, तुझ में भी ब्रह्म। गऊ में ब्रह्म हत्यारे में भी ब्रह्म। व्याभिचारी में भी ब्रह्म, कन्याकुमारी में भी ब्रह्म और ऐसा मानने वाला जो किसी भी प्रकार का पाप नहीं मानता, हम उससे यह पूछना चाहते हैं कि जब यह पाप और दुराचार ही नहीं तो क्या तुम अपनी स्त्री अथवा लड़की को किसी दूसरे पुरुष को जो कि में पुरुष न होकर आपकी भाषा में ब्रह्म ही है, व्याभिचार के लिये सौंप दोगे ? अथवा बलात् व्याभिचार करने पर पुलिस स्टेशन तो नहीं पहुंचोगे ? दूसरे चोर रूपी ब्रह्म द्वारा आपके घर पर डाका डालने पर अथवा जेब काट लेने पर चिलाओगे तो नहीं ? तुम चिल्लाते भी हो और रोते भी हो पर कहने के लिये उन्हें ब्रह्म ही ब्रह्म कहते हो। यदि चोरी, डाके, जेब काटने, व्याभिचार करने, कतल वाले, दहेज के न मिलने पर स्त्रियों को जिन्दा जला देने वाले सब ब्रह्म अथवा ब्रह्म का ही रूप हैं अर्थात् पूर्ण पुरुष ही हैं तो फिर सरकार को आज के दिन तुम्हारी यह बात मानकर सबको सब सजा माफ कर देनीचाहिए। फिर देखना समाज में इन ब्रह्मों की उछल-कूद क्या गुल खिलाती है।

जब सब ब्रह्म हैं। सब अच्छे ही हैं। सब सत्य है, कोई बुरानहीं है तो ओ वेदान्त के नाम पर वेदान्तेष्टि अर्थात् ईश्वर की अन्तेष्टि करने वालो ! तुम हमें यह तो बताओ कि आदिगुरु महान् पण्डित शंकराचार्य ने बौद्धों के साथ सैंकड़ों शास्त्रार्थ करके उनको हिमालय से लेकर कन्या कुमारी तक बसे भारत से क्यों खदेड़ दिया था। मण्डन मिश्र जैसे महान् विद्वानों को शास्त्रार्थ में हराकर उनका नाम तक सुरेश्वराचार्य के रूप में बदलकर अपना शिष्य क्यों बना लिया था ? मेरा यह ध्रुव मत है कि मार्ग-भ्रष्ट लोगों ने ही अपना पाप छुपाने के लिए और अपना उल्लू सीधा करने के लिए अपने को तथा औरों को ब्रह्म अथवा पूर्ण पुरुष कहना शुरु किया। जिससे कि उनके पाप छुप जायें। और यह पापों को छुपाने की एक बहुत अच्छी खासी तरकीब

Scanned with CamScanner

उन पाखण्डियों ने खोजी थी। परन्तु इस ढोल की पोल ज्यादा देर तक न रह सकी।

यदि तुम सब ब्रह्म ही ब्रह्म हो तो फिर साधना किसकी करने चले हो ? अभी हाल ही में एक व्यक्ति मेरे बम्बई में चैम्बूर निवासकाल के समय आया और कहने लगा महाराज। धारणा, ध्यान और समाधि को बताने का कष्ट करें। मैंने पूछा, क्या आप उस पूर्ण पुरुष से भिन्न अपनी आत्मा को मानते हो अथवा नहीं। उसने कहा- नहीं महाराज, मैं तो केवल ब्रह्म ही ब्रह्म को मानता हूं, उससे भिन्न दूसरी कोई चीज नहीं मानता। मैंने कहा भले मानस ! यदि तुम स्वयं ही ब्रह्म हो तो योगाभ्यास के चक्कर में क्यों पड़े हो। पूर्ण पुरुष सर्वानन्द ब्रह्म जो आनन्द तथा शान्ति का अद्भुत भण्डार है, क्या उसको भी किसी की उपासना वा साधना करने की आवश्यकता होती है ? जाओ तुम्हें ध्यान योग की कोई आवश्यकता नहीं। तुम तो स्वयं ब्रह्म हो, आनन्द में रहो। वह फिर कहने लगा, नहीं महाराज ! मेरा भी कल्याण करो। अविद्या अन्धकार तथा अशान्ति से पीड़ित हूं कोई रास्ता दिखाकर मेरा भी कल्याण करो। मैंने कहा ओ भले मानस जरा ध्यान से बोल। तू क्या बोल रहा है, तुझे और अज्ञान ? यह कैसे हो सकता है। क्या ब्रह्म जो सर्वज्ञ अर्थात् सब कुछ जानता और सर्वव्यापक कण-कण में विराजमान है, उसको भी कभी अज्ञान हो सकता है, क्योंकि तुम तो अपने आपको ब्रह्म ही मानते हो।

हमें ब्रह्मवादियों से एक और प्रश्न पूछना है और वह यह कि पूर्ण पुरुष ब्रह्म जो पूर्ण ही है जिसमें लेशमात्र भी न्यूनता नहीं है, उसको यह क्या आवश्यकता थी कि पहले संसार को बनाता और फिर उसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के पाप करता फिरता ? क्या इस सबके बिना उसे नींद नहीं आती थी ? क्या पाप करने वाला भी कभी पाक, पवित्र ज्ञानी, और आनन्दित हो सकता है ? भाई साहब अबकी बार आप मेरे उत्तर को ध्यान से सुन ! अबकी बार मैं ऐसी बात कहने जा रहा हूं कि जिससे आपकी पिछली भी सब शंकायें निर्मूल हो जायेंगी। अच्छा तो जल्दी बताइये वह कौनसा सिद्धान्त है ? सुनिये भाई साहब वेदांती-ये जो कुछ आपको दिखाई दे रहा है, यह वस्तुतः कुछ भी नहीं है। हां यह केवलमात्र एक स्वप्न है। जैसे स्वपन में दिखाई देनेवाली वस्तुएं

Scanned with CamScanner

दिखाई तो देती हैं परन्तु होती कुछ भी नहीं। ठीक यही इस संसार की स्थिती है। यह कुछ भी नहीं है। न प्रकृत्ति है न आत्मा, न पुण्य है न पाप, न जन्म है न मरण। यह तो केवल एक स्वप्नमात्र ही है।

-सि·· वाह, अबकी बार तो आपने कमाल ही कर दिया। भाई साहब, जब आप और हम सब स्वप्न की अवस्था में ही हैं तो फिर आपने यह कैसे कह दिया कि यह स्वप्न है। क्या किसी सोये हुये आदमी को स्वप्न की अवस्था में यह भी पता रहता है कि मैं अब सोया हुआ हूं। वाह रे ब्रह्म वादियो तुमने तो कमाल ही कर दिया। वास्तविक बात तो यह है कि प्रत्येक आदमी जब निद्रा से उठता है तो तभी उसको ज्ञान होता है कि मैं सोया हुआ था। अर्थात् जागा हुआ व्यक्ति ही कहेगा कि यह सो रहा है। एक सोया हुआ व्यक्ति दूसरे सोये हुए को कैसे कह सकता है कि तुम सो रहे हो। जैसे एक पागलखाने का पागल सब राह चलनेवालों को पागल ही बताता है; ठीक वैसी ही तुम्हारी भी लीला है। जैसे किसी पागल के कहने से सब पागल नहीं होते, वैसे ही तुम जैसे सोये हुए स्वप्न ले रहे के द्वारा भी यह कहने पर कि सब सोये हुए हैं, सब स्वप्न में हैं, दुनियां केवल एक स्वप्नमात्र है, एक कोरा पागलपन ही है। अतः इस वैचारिक खोज से यह सिद्ध होता है कि यह दुनियां एक स्वप्न नहीं, अपितु जागृत्त अवस्था में है। जो कुछ भी इस संसार में हो रहा है वह सब वास्तविक ही है।

पहाड़ भी हैं और नदियां भी। तालाब भी हैं और झीलें भी। मूर्ख भी यहीं बसते हैं और अकलमंद भी। यहां पाप भी होता है और पुण्य भी। दान भी दिखाई देता है और लूट भी। यह सब कुछ सत्य ही है। झूठ कुछ भी नहीं। वेदान्त दर्शन भी इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है कि ओ आत्माओ! अपने कल्याण तथा आनन्द के लिये उस ब्रह्म की जिज्ञासा करो। उसी की इच्छा करो और उसको जानो कि वह कैसा है? सुनो! जिसने जगत् को पैदा किया अर्थात् जिसने जड़ परमाणुओं को जोड़-जोड़कर इस सुन्दर सृष्टि की रचना की है और जो इस सृष्टि को चला रहा है। कर्मों के अनुसार प्रत्येक जीव को फल दे रहा है। किसी को गाय और किसी को कुत्ता। किसी को सूअर और किसी को उल्लू। किसी को गधा और किसी को मनुष्य बना रहा है। यह वही ब्रह्म है। वह पूर्ण पुरुष इस संसार को बनाकर उस

Scanned with CamScanner

को प्रलय में भी ले जाता है। वही ब्रह्म पूर्ण पुरुष जानने योग्य है, उसी के जानने से सब ताप और क्लेश नष्ट हो जाते हैं। उसको छोड़कर आनन्द प्राप्ति का और दूसरा मार्ग नहीं है। इसलिये हमें उसके बनाये शरीर तथा संसार की सहायता से और उसके दिये वेद ज्ञान से ध्यान योग को जानकर सदा आनन्द में रहना चाहिये।

विचारक महोदय! अभी तो आप केवल आत्मा और परमात्मा की बात कर रहे थे। परन्तु अभी आपने एक तीसरी चीज प्रकृत्ति और खड़ी कर दी है। यह प्रकृत्ति किस बला का नाम है? महोदय! प्रकृत्ति वह पदार्थ है, जिससे हमारे और तुम्हारे तथा अनेक प्रकार के प्राणियों के शरीरों की रचना होती है, जिससे वह दिखाई देने वाला समस्त संसार सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी तथा इस संसार में मिलने वाले अनेक प्रकार के तत्वों की जैसे कि रेडियम, बेरियम आदि की रचना होती है, इसी को प्रकृत्ति कहते हैं। विचारक महोदय! हमने यह तो जान लिया कि आत्मा परमात्मा नहीं। वह उससे बिल्कुल भिन्न है, क्योंकि यदि आत्मा ही परमत्मा माना जाये तो इससे परमात्मा के सिर पर अनेक प्रकार के पापों का कर्त्ता होने सहित सैंकड़ों दोष आते हैं। परन्तु आपकी यह बात समझ में नहीं आई कि प्रकृत्ति भी कोई चीज है। क्या यह प्रकृत्ति ही पुरुष नहीं? नहीं भाई साहब! यह प्रकृत्ति पुरुष से बिल्कुल एक अलग चीज है। पूर्ण पुरुष चेतन है और यह प्रकृत्ति ठीक उसके विपरीत जड़ है। यदि प्रकृत्ति ही पुरुष होती तो उसको पुरुष के तुल्य चेतन भी होना चाहिये था। परन्तु हम देख सकते हैं कि ईंट, पत्थर, मिट्टी, लकड़ी, लोहा तथा पानी बिना चेतन के हिलाये कभी भी अपने आप हिलते-डुलते नहीं। जैसे एक मनुष्य में तथा पशु-पक्षी में तब तक हिलना-जुलना, खाना-पीना, बोलना-चलना आदि व्यवहार दीख पड़ता है जब तक कि उसमें आत्मा का निवास रहता है। ज्योंही आत्मा उस शरीर को छोड़ता है त्यों ही उसके वह सब खाने-पीने, विचारने आदि के व्यवहार समाप्त हो जाते हैं। इससे यह पता चलता है कि प्रकृति में अपने आप कुछ करने अथवा विचारने की शक्ति नहीं है। अतः सिद्ध होता है कि प्रकृति पुरुष नहीं अपितु पुरुष से बिल्कुल अलग चीज है अथवा यूं कह लीजिये कि प्रकृति एक पृथक् सत्ता है।

ले. विचारक महोदय! मुझे आपके विचार सुनकर कुछ शंका उत्पन्न

हो गई है। हां तो पूछिये क्या शंका है आपको? देखिये, यदि यह प्रकृति अर्थात् 'नेचर' जड़ है अर्थात् 'नान लिविग' है तो इसके यह भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप अपने आप कैसे बन जाते हैं? हमारे सिर में अपने आप जूँ तथा लीख, वर्षा कि ऋतु में गिजाई तथा अनेक प्रकार के मच्छर और कीड़े क्या अपने आप अपनी शक्ति से नहीं बन रहे हैं? यदि इनमें ज्ञान तथा क्रिया करने की शक्ति न होती तो भिन्न-भिन्न कैसे बन पाते? यदि यह सूर्य, चन्द्रमा तथा पृथ्वी चेतन पुरुष न होते तो यह सब नियम से घूमते कैसे? सो इन सब दृश्यों के होते हुये आपकी इस प्रकृत्ति को जड़ कहनेवाली बात मेरे गले नहीं उतरती। इतना ही नहीं यदि इनके पीछे कोई चेतनकर्त्ता होता तो वह अवश्य ही दिखाई देता। अत: मेरे विचार में तो प्रकृति चेतन है और पुरुष ही है भाई साहब, जरा बुद्धि पर जोर देकर विचारिये कि कोई वस्तु केवलमात्र इस कारण से चेतन नहीं कही जा सकती कि वह नियम से चलती है, अथवा पहले नहीं थी और अब बनी हुई दिखाई देती है। यूं तो मेरे भाई आपको अनेकों चीजें दिखा सकता हूं, जिनको कोई बनाने वाला है पर दिखाई नहीं देता कि वह कब और कैसे, उन्हें बनाता वा चलाता है। अच्छा तो आप बताईये कि आप जो प्रतिदिन अपनी शेव बनाते हैं, इसका बनाने वाला कौन है? यह क्या मामूली सी बात पूछी आपने। इसको तो हर अकलमंद और मूर्ख जानता है कि शेव बलेड से बनाई जाती है। तो क्या भाई बलेड को दाढ़ी पर रख देने मात्र से ही वह बलेड अपने आप शेव कर देगा? नहीं तो, मैंने कब कहा कि केवल बलेड के दाढ़ी पर रख देने से ही शेव बन जाती है, हाथ तो लगाना ही पड़ेगा। अच्छा तो यदि किसी आत्मा से रहित मनुष्य के हाथ में बलेड रख दिया जाये तो क्या वह अपने आप अपनी शेव कर लेगा। और यदि बिना आत्मा के वो ऐसा कर लेता तो दाह कर्म से पूर्व किसी भी मनुष्य के मृत्तक शरीर को स्नान तथा शेव कराने का कष्ट न दिया जाता। क्यों जी, आपका क्या विचार है? नहीं नहीं, ठीक है; आप ठीक ही कह रहे हैं। अब मैं समझ गया कि केवल मात्र प्रकृत्ति बिना किसी चेतन व्यक्ति की सहायता के अपने आप कुछ नहीं कर सकती; जब तक कि करवाने वाला उससे कुछ काम न करवायें अर्थात् जब तक उसे प्रेरणा न दे।

बहुत प्रसन्नता है कि आप शीघ्र ही सच्चाई को समझ गये परन्तु एक बात बताईए कि जड़ प्रकृति के 'संघात' जिसको हम 'शरीर' कहते हैं, को शेव बनाने के लिये हाथ हिलाने की गति किसने दी ? उसी परम पुरुष परमात्मा ने। ओहो ! इतना बताने पर भी आपके दिमाग में अभी बैठा नहीं। अभी हमने पीछे एक लम्बी बातचीत से सिद्ध किया था कि यदि परमात्मा को ही इन प्राणियों के शरीरों से कार्य लेनेवाला मानेंगे तो वर्तमान में हो रहे सब के सब पाप उसके ही किये माने जायेंगे।

क्षमा करना, विचारक महोदय ! मैं भूल गया, परम पुरुष परमात्मा नहीं, अपितु आत्मा ही शरीर को चलाता और उससे काम लेता है। तो भाई साहब अब हम इस विचार पर पहुँचे हैं कि हाथ और बलेड मिलकर भी दाढ़ी नहीं काट सकते, केवल मिट्टी और हाथ का सम्बन्ध होने से घड़ा वा सुराई नहीं बन सकती । सुराई और घड़ा तो बहुत बड़ी बात है, एक छोटी से छोटी सूई भी नहीं बन सकती। कब बन सकेगी ? जबकि हाथ और दूसरे बनाने के साधन के साथ-साथ उस हाथ में आत्मा की प्रेरणा भी होगी। अर्थात्, जब प्रकृत्ति के पिण्ड इस जड़ शरीर में आत्मा भी होगी। क्यों जी, भाई साहब ! जिस अपनी आत्मा की सहायता से आप अपने हाथ के द्वारा शेव बनाते हैं, अथवा कोई और कार्य करते हैं, क्या आपने आत्मा कभी देखा है ? अच्छा यदि अपने शरीर के प्रेरक को आपने कभी नहीं देखा तो क्या इस संसार में विचरने तथा काम करनेवाले किसी अन्य प्राणी के चलाने वाले ड्राईवर को अर्थात् उसके प्रेरक-आत्मा को कभी देखा है ? नहीं विचारक महोदय, न तो मैंने अपने ही शरीर को गति देनेवाले को कभी देखा है और न ही दूसरे किसी प्राणी के शरीर को गति देने वाले आत्मा को। आपकी बात सत्य है; आपने उसको कभी नहीं देखा ! अब कुछ और देखिये कि आपकी यह आंख देखने का ही काम करती है, सूंघने का नहीं, और नाक सूंघने का ही काम कर सकता है परन्तु देखने का नहीं स्वाद का पता लगाना हो तो जिह्वा से ही पता चलेगा, न कान से, न आंख से, न नाक से और न ही इस शरीर पर चढ़ी हुई त्वचा से ही अर्थात् सारा शरीर एक नियम में बंधा कार्य करता है और वह भी अपने आप नहीं, अपितु तब तक जब तक कि इसमें इसका चलानेवाला चालक

Scanned with CamScanner

आत्मा भी रहता है। मेरी इस बात को कहने का केवल अभिप्राय है; आपकी पहले की गयी शंका का समाधान करना अर्थात् जहां भी प्रकृत्ति में जो कुछ भी कार्य नियम पूर्वक हो रहा है; वह अपने आप नहीं हो रहा अपितु उसके पीछे उसके करने वाला चेतनकर्त्ता आत्मा अवश्य ही विराजमान रहता है।

सि. भोले भाई! जब आप अपने आपको ही अब तक नहीं देख पाये तो संसार के उस कर्त्ता पुरुष ब्रह्म को कैसे देख सकेंगे? जैसे आपका तथा अन्य प्राणी शरीरों का कर्त्ता दिखाई नहीं देता; परन्तु आप जान गए हैं कि न दिखाई देते हुए भी हमारे में वह निवास कर रहा है। वह आत्मा ही सब शारीरिक कार्यों का संचालक है। ठीक इसी प्रकार से ही यह सब जो नियमपूर्वक सूर्य, चन्द्र, तारा तथा पृथ्वी की गति दिखाई देती है; वह भी उस आत्मा के ही समान न दिखाई देने वाले महान् ब्रह्म पूर्ण-पुरुष की ही प्रेरणा शक्ति का प्रताप है। अर्थात् हमारी इस वार्त्ता से यह सिद्ध हुआ कि प्रकृत्ति पुरुष नहीं अपितु पुरुष इससे बिल्कुल भिन्न है। प्रकृत्ति जड़ है और सदा स्थिर एक स्थान् पर स्थिर रहने वाली है। जैसा कि विश्वभर के बुद्धिजीवी भी इसे वैज्ञानिक स्वीकार करते हैं। परन्तु जब इस स्थिर प्रकृत्ति से बने इस जगत् को हम देखते हैं तो इसका प्रत्येक जर्रा हमें घूमता हुआ दिखाई देता है। अतः इस खोज से यह सिद्ध होता है कि इस संसार में वेदान्त दर्शन के सिद्धान्त के अनुसार तीन अनादि सत्तायें विद्यमान हैं। एक है सदा रहनेवाला अर्थात् अनादि, स्वतन्त्र, चेतन-सत्ता आत्मा, जो कि कम ज्ञान वाला होने के कारण से इस संसार में उल्टे सीधे कर्मों को करता है। दूसरा है सदा रहने वाला सर्वव्यापक पूर्ण ज्ञानवान् परमात्मा अर्थात् 'पुरुष' जो इसके कर्मों के अनुसार ही इस आत्मा को विभिन्न प्रकार की सृष्टि तथा शरीरों से युक्त करता, तथा भविष्य में इसको पापों से बचाने के लिये वेद ज्ञान देता है, और साथ ही अधर्म से हटाने के लिये इसके हृदय में भय, शंका तथा लज्जा के रूप में संकेत भी करता है। परन्तु आत्मा आदेश अवहेलना करके जब अपनी इच्छा के अनुसार चलता है तो उस ब्रह्म के आनन्द तक न पहुंच कर संसार के दुःखों में ही तड़पता रहता है। और अन्त में तीसरी वस्तु है प्रकृत्ति, जो कि इस भौतिक

संसार की रचना का कारण है, जिसकों कि वह ब्रह्म अपनी शक्ति के द्वारा कई रूपों में बनाता है। और जिसको पृथ्वी, चन्द्र, तारा तथा सूर्य के समान एक विचित्र प्रकार की गति भी देता है।

वि॰ विचारक महोदय ! आप कभी तो उसको ईश्वर कहते हैं, कभी ब्रह्म, कभी पुरुष और कभी परमात्मा। क्या यह सब भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के नाम हैं अथवा एक ही व्यक्ति के ? वि॰ आपने बहुत उचित प्रश्न किया, यह सब नाम एक ही व्यक्ति के हैं अर्थात् उस सर्वश्रेष्ठ सृष्टि के बनानेवाले कर्त्ता को ही संसार की रचना करने के कारण, ब्रह्म नाम से कहते हैं। उसी 'ब्रह्म' को सारे संसार के कण-कण में बिना लगाव के निर्लेप रूप से विद्यमान रहने के कारण पूर्ण 'पुरुष' कहते हैं। और उसी ही पूर्ण पुरुष को सारे संसार का स्वामी होने से 'ईश्वर' भी कहते हैं। वह आनन्दघन ब्रह्म एक ही है परन्तु अनेक गुणों के होने से वह प्रभु अनेक नामों से पुकारा जाता है। न कोई अन्य संसार की इस प्रकार से विचित्र रचना कर सकता है और न ही उसको छोड़ कर कोई दूसरा 'ब्रह्म' कहलाने का हकदार ही है।

वि॰ विचारक महोदय ! जिस प्रकार से आपने उस पूर्ण ब्रह्म पुरुष को सर्वव्यापक अर्थात् सब जगह होने वाला कहा है इससे तो वह परमात्मा भी संसार में फैली हुई दूषित वस्तुओं के संयोग से गन्दा होने वाला हो जायेगा। वि॰ नहीं भाई साहब ऐसा दोष उस परमात्मा में नहीं आ सकता आखिर क्यों नहीं आसकता ? कारण यह है कि गन्दगी केवल उन पदार्थों पर लगती जो स्थूल हैं अथवा प्रकृति के परमाणुओं से मिलकर बने हैं क्योंकि परमात्मा बिना परमाणुओं के बना होने तथा अत्यन्त सूक्ष्म और निराकार है इस लिये उसे किसी भी प्रकार की सांसारिक गन्दगी नहीं लगती अतः वह सदा और सब जगह अपने शुद्ध स्वरूप में ही रहता है इस लिये यह सब संसार का बनाने वाला सर्वव्यापक निराकार ब्रह्म ही ध्यान करने के योग्य है।

वि॰ तो हमारी इस सारी चर्चा का सार यही है कि परमात्मा पूर्ण पुरुष, पूर्ण ही है और आनन्दघन है, उसे किसी दूसरे व्यक्ति की आवश्यकता नहीं। वह चेतन तथा सदा रहनेवाला है, और प्रत्येक प्राणी

Scanned with CamScanner

को उसके कर्मों के अनुसार फल देता है दूसरी ओर आत्मा भी 'सत्' अर्थात् सदा रहनेवाला और चेतन तथा स्वतन्त्र कार्य करनेवाला एक चेतन व्यक्ति है; परन्तु आनन्द इसके पास नहीं। सो यह आनन्द की इच्छा करने वाला आत्मा आनन्द की प्राप्ति के लिये उस सर्वव्यापक परमात्मा-पुरुष के पास जा सकता है। तीसरा यह दिखाई देने वाला 'जगत्' अर्थात् यह जड़ प्रकृत्ति केवल 'सत्' है। न तो इसमें किसी प्रकार की चेतन शक्ति है और न ही इसमें किसी प्रकार का आनन्द। सो यह आत्मा आनन्द पाने के लिये इस जड़ प्रकृत्ति के सहारे नाव के तुल्य उस आनन्द स्वरूप परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। आत्मा लुला है और प्रकृत्ति अन्धी है। आत्मा और प्रकृत्ति का यह मेल एक अन्धे और लूले का मेल है अर्थात् बिना चलने के साधनवाला यह आत्मा इस प्रकृत्ति का उसी के वेद ज्ञान के अनुसार प्रयोग करके उस पूर्ण आनन्दघन पुरुष को पा सकता है। इसी लिये वह पूर्ण पुरुष इस जड़ प्रकृत्ति को विभिन्न रूप देकर इस आत्मा को प्रदान करता है।

'वेदान्त' अर्थात् वेद का अर्थ ज्ञान भी होता है, सो ज्ञान जहां पर शान्त हो जाता है, वह पूर्ण पुरुष परमात्मा ही जीवन का परम ध्येय है। अथवा वेद ज्ञान द्वारा ही जिसका सत्य-सत्य बोध होता है, वह पूर्ण पुरुष ब्रह्म ही जीवन का रहस्य है। जैसे साईंस सीखने के लिये किसी साईंस के स्कालर (अर्थात् विद्वान् अध्यापक) का ज्ञानमय ग्रन्थ पढ़ने से साईंस का ज्ञान होता है, ठीक वैसे ही आनन्द प्राप्त करने के लिये उस आनन्द के भण्डार पूर्णपुरुष के 'वेद' ज्ञान की भी अत्यन्त आवश्यकता है। यही सर्वमान्य सच्चा वेदान्त है। परन्तु वेदान्त के नाम पर जो न तो उस पूर्ण-पुरुष से भिन्न; स्वतन्त्र आत्मा ही मानते हैं और न ही जड़ प्रकृत्ति; वह दर्शन वेदान्त नहीं अपितु 'वेदान्तेष्टि' अर्थात् सत्य ज्ञान की गम्भीरता को और मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य ब्रह्म पुरुष को ही समूल नष्ट करने वाले हैं। अतः सिद्ध हुआ कि पूर्ण पुरुष, प्रकृत्ति तथा आत्मा तीनों भिन्न-भिन्न सत्तायें हैं, अर्थात् प्रकृत्ति न तो पुरुष ही है; और न पुरुष ही प्रकृत्ति है, न आत्मा परमात्मा है और न परमात्मा आत्मा ही।

क्यों भाई साहब! क्या अब आप मेरी इस वैचारिक खोज से

Scanned with CamScanner

सहमत हैं?

हां विचारक महोदय, आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। आपने मुझे संसार के सत्य ज्ञान का जो आत्मिक शान्ति के लिए सत्य एवं गूढ़ रहस्य बताया है, उसके लिए मैं आपका हृदय से आभारी हूं। आपका यह महान् अहसान मैं जीवनभर नहीं भूलूंगा। ईश्वर आपको सदा आनन्दित रखे।

सिद्धान्तों से ऊपर......
नरक से भी नीचे।

बन्धुवर! जीवन छोटा है और समस्याएं बहुत बड़ी हैं। इसलिये मनुष्य को जीवन में अपने सत्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिये कुछ सिद्धान्तों को बनाकर एक ऐसे मार्ग पर चलना चाहिये जिससे कि वह शीघ्र ही अपने उद्देश्य को प्राप्त करके अपना कल्याण कर सके। जब तक कोई मनुष्य अपना कोई मार्ग नहीं बनाता तब तक वह संसार में यों ही भटकता रहता है। इसलिये मानवमात्र के कल्याण के लिये सिद्धान्तों का होना अनिवार्य है।

जब तक मनुष्य अपने आपको परमात्मा से भिन्न नहीं मानता तब तक उसके हृदय में परमात्मा प्राप्ति की इच्छा अथवा प्रेरणा भी नहीं होती।

Scanned with CamScanner

कारण यह है कि जो अपने आपको ही ब्रह्म अथवा पूर्ण पुरुष मान बैठा है, वह पूर्ण पुरुष को जानने का प्रयास क्यों करेगा और जब वह प्रयास ही नहीं करता तो उसको आनन्द की प्राप्ति कैसे हो पायेगी ? सो, अब आप अपने आपको ब्रह्म न मानकर जीव ही मानें और साथ ही यह भी हृदय में धारकर चलें कि जैसा आप पुरुषार्थ करेंगे वैसा ही आपको लाभ भी होगा।

देखिये विचारक महोदय ! आपने जो कुछ कहा है, सो मैंने उसमें से बहुत ज्ञान प्राप्त किया है। मुझे बहुत सी नई बातों का भी आपकी वार्ता से प्रकाश हुआ है। परन्तु आपने जो ये कहा कि मैं आपके इस सिद्धान्त को मान लूं, यह बात आपकी मुझे अटपटी लगी है। वस्तुतः 'मानना' ही दुःख का मूल कारण है, क्योंकि जब व्यक्ति किसी को मान लेता है, तब वह अपनी बुद्धि से विचारना बन्द करके हर गलत सिद्धांत और हर गलत व्यक्ति की ओर झुक कर बुरी तरह से फंस जाता है। इसी 'मानने' के रोग के कारण ही आज विश्व में अनेकों पाखण्ड तथा नये से नये मत प्रचलित हो रहे हैं। इतना ही नहीं, मान लेने के इस सिद्धान्त से युक्त व्यक्ति की सारी विचार एवं खोज करने की प्रवृत्ति कुण्ठित हो जाती है और वह सदा के लिये अज्ञान के एक गहरे गड्ढे में गिरकर जीवनभर दुःख ही दुःख ढोता रहता है। इसलिये व्यक्ति को विचारना चाहिये, देखना चाहिये परन्तु किसी कीमत पर भी किसी सिद्धान्त को कदापि नहीं मानना चाहिये।

भाई साहब ! शायद आपने मेरे 'मानने' के अर्थ को नहीं समझा। मैं भी यही विचार करता हूं कि कभी भी हमें एकदम किसी व्यक्ति के कहनेमात्र से; जैसा वह कहता हो, वैसा ही नहीं मान लेना चाहिये। परन्तु जब हमें किसी के बताने पर और स्वयं विचारने पर कोई सिद्धान्त समझ में आ जाये तो उसे मान ही लेना चाहिये। इस प्रकार मानने में हानि ही क्या है ? विचारक महोदय ! हानि ही नहीं, अपितु किसी सिद्धान्त को मान लेना एक बहुत बड़ा पाप और बन्धन है और 'सिद्धान्त' यह भी कोई कम खतरनाक चीज नहीं है। आज इन सिद्धान्तों तथा सिद्धान्तवादियों ने ही सारी दुनियां की शान्ति भंग की हुई है। इन सिद्धान्तों ने ही आज विश्व का जीना दूभर कर दिया है,

Scanned with CamScanner

सो सुख चाहने वाले को इन सिद्धान्तों आदि के चक्कर में न फंसकर सदा स्वतन्त्र ही रहना चाहिये।

भाई साहब ! मुझे ऐसा लग रहा है कि आप स्वयं अपनी बुद्धि से काम लेकर नहीं बोल रहे, अपितु आपके अन्दर कोई और ही बोल रहा है। बात तो चल रही थी मानने न मानने की और आप पकड़ बैठे सिद्धान्त को। देखिये सिद्धान्तों से हमारा अभिप्राय: उन परीक्षित कसौटी पर कसी हुई मान्यताओं से है, जिनके मानने से सबको सदा सुख ही होता है। जैसे मुख से पानी पीकर ही प्यास बुझ सकती है; यह एक सर्वसिद्ध सत्य सिद्धान्त है। क्या आप इस सिद्धान्त से इन्कार करके कान से पानी पीकर अपनी प्यास बुझाने का प्रयास करेंगे ? यदि आप भी इस मान्यता को सत्य समझते हैं तो यह आपका भी सिद्धान्त हो जाता है। अभी जो आप इस समाज तथा देश की सिद्धान्तों के द्वारा दुर्दशा होने की बात कह रहे थे, सो आपको इस प्रकार से कहना चाहिये कि उल्टी मान्यताओं को सिद्धान्त मानकर लोग गड्ढे में गिर रहे हैं। जैसा कि साधना तो करेगा गुरु और आनन्द होगा चेले को, रोटी खायेंगे महन्त और पेट भर जायेगा जनता का, विचार शक्ति का प्रयोग करेंगे भोगवान् और ज्ञान बढ़ेगा शिष्यों का।

क्यों भाई साहब ! यदि आप यहां से दिल्ली जाना चाहें तो क्या बम्बई की ओर मुंह करके बहुत शीघ्र भागने से कभी दिल्ली आ सकेगी ? यही वे उल्टी मान्यताएं हैं जिनसे आज का समाज पीड़ित हो रहा है न कि अच्छे सिद्धान्तों के पालने से। प्रेम करो, सदा सत्य बोलो, अपने अन्दर खोजो। भगवान् अन्दर ही मिलेगा। उसे पाने के लिये प्राणीमात्र पर दया करो। सेवा और साधना ही उसको पाने के मुख्य साधन हैं। इस प्रकार से ये हैं वह वास्तविक सिद्धान्त जिनको मानने से संसार का कोई भी बुद्धिजीवी व्यक्ति कभी भी इन्कार नहीं कर सकता और इनसे ही देश तथा समाज को वास्तविक आनन्द हो सकता है।

विचारक महोदय ! फिर आप घूम-फिर कर मानने की ही बात कहने लगे। जिन्होंने मान लिया वे कुए के मेढ़क बनकर जीवन में कोई

Scanned with CamScanner

उन्नति नहीं कर सके अपितु सारी आयुभर सड़ते ही रहे। परन्तु इसकी अपेक्षा जो लोग मानने के सिद्धान्त से दूर रहे वे आज विश्व में उन्नति के शिखर पर दिखाई दे रहे हैं। अतः किसी भी सिद्धान्त को मानना मानवता को उसके मूल से ही नष्ट कर देना है। भाई साहब ! थोड़ा रुकिए, हमारी भी सुनिए। ऐसा लगता है कि शायद आप मेरे 'मानने' के शब्द का कुछ और ही अर्थ लगा बैठे हैं। मानने का अर्थ है किसी सिद्धान्त को अच्छी प्रकार से ठोक-पीटकर देख लेने के उपरान्त उसको जीवन में धारण करके उसके अनुसार चलना अर्थात् उस विचारधारा को मान्यता प्रदान करना। इसी को मानना अथवा मान देना कहते हैं। जैसे एक जवान बेटा अच्छी प्रकार से जानता है कि यह उसका पिता है, यह है जानना। क्योंकि वह अच्छी प्रकार से समझकर ही ऐसा कहता है अर्थात् पुत्र को ठीक-ठीक ज्ञान हो गया है कि यह उसका पिता है। वह किसी के भी पूछने पर अपने पिता का ठीक-ठीक नाम बता देता है और यदि कभी किसी स्थान पर अपने पिता का नाम लिखने की आवश्यकता पड़े तो उसका नाम लिख भी देता है। यह है सिद्धान्त की जानकारी होना।

एक सर्दी की ऋतु में ऐसा हुआ कि एक पिता ने ज्यों ही चारपाई में बैठकर अपनी रजाई को ओढ़कर एक धार्मिक पुस्तक पढ़नी आरम्भ की तो अचानक बिजली चली गई। उसके पास ही उसका समझदार पुत्र अपनी चारपाई पर रजाई को ओढ़कर पढ़ रहा था। पिता ने पुत्र को आवाज लगायी और संकेत किया कि बेटा बिजली चली गयी है, जाओ बाजार से एक मोमबत्ती ले आओ। शायद सारी रात ही लाइट न आये और सुबह भी परेशान करे, सो जाओ मेरे प्यारे बेटा जल्दी करो। पिता को केवल सिद्धान्त और वाणी के रूप में जाननेवाला बेटा चुप रहा। उस जानने, पर वास्तव में न माननेवाले बेटे ने अपना आराम छोड़ना पसन्द नहीं किया। बाहर सर्दी थी और रजाई गर्म थी। सुख की चाह के सामने पिता की आज्ञा पालन में सर्दी सहन के कष्ट को देखकर वह कह उठता है पिता जी नमस्ते, अब मैं सुबह उठूंगा। पिता बोलता ही नहीं। बेचारा क्या बोले ? वह फिर कहता है अच्छा पिताजी नमस्ते, मैं सो रहा हूं।

Scanned with CamScanner

इसको कहते हैं जानना पर न मानना। वह अज्ञानी बालक जानता है कि यह तेरा पिता है। पर उसकी आज्ञाओं के अनुसार किञ्चित् भी चलना नहीं चाहता। सो जिसने किसी भी सत्य को खूब खोज लिया है, कई दिन मास और वर्ष लगाकर उसका वास्तविक स्वरूप जान लिया है। उसका यह सब कुछ करने का लाभ तब ही है, जब कि वह उसके अनुसार चलना भी प्रारम्भ करे।

बन्धुवर! जिस मानने को आप दुःख और अवनति का मूल समझते हैं, हम यहां उसकी चर्चा नहीं कर रहे। क्योंकि बिना विचारे आंख मूंद करके मान लेना तो मूर्खों का ही काम है। आपकी तरह हम भी इसको गलत और जाति की अवनति का कारण ही समझते हैं। जैसा कि कुछ लोगों ने यह प्रचार किया कि ईसा मसीह बिना बाप के केवल मां से ही उत्पन्न हो गया था। मूर्ख इसे मानने लगे। हनुमान के एक लम्बी पूंछ थी। वह लोग इसको भी मानने लग गए। विचारक कहता है कि बिना पुरुष के संयोग के स्त्री से पुत्र होना असम्भव है, ये एक सत्य सिद्धान्त है। सो हम नहीं मानते कि ईसा मसीह बिना बाप के केवल मां से उत्पन्न हो गया था। या तो उसका कोई बाप था अथवा वह व्याभिचार की सन्तान था। दूसरी बात हनुमान बन्दर नहीं हो सकता। वह मनुष्य था। क्योंकि रामायण में जो चार वेद और छः शास्त्र को पढ़ने की बात आयी है, वह किसी इन्सान से ही जुड़ सकती है न कि बन्दर के साथ। वास्तविकता ये है कि हनुमान इतना बुद्धिमान् और बलवान् था कि भगवान् श्री रामचन्द्र जी किसी भी कार्य को करने से पूर्व उनसे प्रायः पूछ लिया करते थे अर्थात् राम की सेना में उसकी बड़ी पूछ थी। आंख के अन्धे और गांठ के पूरों ने उसका ऐसा आदर किया कि उसको पूंछ ठोककर पशु ही बना दिया।

इसलिये ये हैं वह झूठी मान्यताएं और सिद्धान्त जिनको मान कर संसार की हानि हुई। जब हम किसी विषय पर अच्छी प्रकार विचार कर लें और उसके लाभों को स्पष्ट देख लें तो इसके पश्चात् उसे जीवन में धारण करने से उस सिद्धान्त का मानना ही कहा जाता है। जैसे कि जो पुत्र किसी को अपना पिता कहे और उसकी आज्ञाओं का पालन भी करे तो इसे ही पुत्र द्वारा पिता का मानना कहते हैं। अन्यथा

Scanned with CamScanner

हम यही कहेंगे कि यह पुत्र अपने पिता को जानता तो है पर मानता नहीं। ठीक इसी प्रकार से किसी व्यक्ति ने यह तो जान लिया कि अग्नि एक बहुत गर्म वस्तु है और वह अपने अन्दर डली हुई किसी भी वस्तु को जला कर नष्ट कर देती है परन्तु यदि कोई व्यक्ति इसको जानता हुआ भी अग्नि में हाथ डाल दे तो वह क्रिया उसकी मूर्खता का ही परिचायक होगी। अत: किसी भी सिद्धान्त का परीक्षण करके उसके सत्य सिद्ध होने पर उसके अनुसार चलना ही वास्तव में उसे मानना है।

देखिए विचारक महोदय! आपको अच्छा लगे या बुरा। पर हम तो किसी भी सिद्धांत को मानना अच्छा नहीं समझते। हम अपने आपको सब सिद्धांतों से ऊपर समझते हैं और यही बन्धन से दूर रहकर सुखी रहने का मूल मार्ग है।

ओ मेरे भोले भाई! तुम कहते हो कि हम किसी भी सिद्धांत को नहीं मानते। आपका यह अपने आपको सिद्धांतों से ऊपर रहने का विचार अपने आप में ही एक धकियानूसी सिद्धांत को मानना नहीं है तो और क्या है? तुम कहनेमात्र से तो लोगों को यह कहते हो कि हम किसी भी मान्यता को नहीं मानते परन्तु क्या यह तुम्हारी किसी भी सिद्धांत को न मानने वाली बात अपने आप में एक अद्भुत मान्यता नहीं है? वास्तव में किसी भी सिद्धांत को न मानना भी अपने आप में एक मान्यता अथवा विशेष सिद्धांत ही है। आप कहने में तो शब्दजाल से यह कह रहे हैं कि हम मान्यताओं अथवा सिद्धांतों से मुक्त हैं परन्तु आपका ऐसा विपरीत विचार ही सिद्ध कर रहा है कि आप स्वयं इस विचित्र सिद्धांत में फंसे हुए हैं। तुम्हारा ऐसा विचित्र सिद्धांत जिसमें कि तुम इतने मद मस्त होकर सिर से पांव तक धंस चुके हो कि आपको दूसरे लोगों की सत्य मान्यताएं अथवा सत्य सिद्धांत कोई सिद्धांत ही नहीं दिखाई देता। स्वयं तो आप इस प्रकार के अद्भुत सिद्धांत को मानते हो परन्तु लोगों को ठीक इससे विपरीत कुछ भी न मानने का उपदेश देते हो।

अच्छा लो भाई! हम ज़ोर नहीं लगाते, तुम किसी को भी मानो। हां एक बात बताओ क्या तुम अपने पिता को भी मानते हो या नहीं?

Scanned with CamScanner

अथवा अपने आपको उसका पुत्र समझते हो या नहीं ? क्या तुम बिना पिता के तो पैदा नहीं हुए ? तुम अपनी पत्नी को भी अपनी ही पत्नी मानते हो या किसी और की। तुम अपने पुत्र तथा पुत्री को अपना ही मानते हो या किसी और का। क्या तुम अपने बेटे को अपना ही मान कर पढ़ा लिखा रहे हो अथवा किसी हलवाई का नौकर समझकर उसे बर्तन साफ करने का काम करवाना चाहोगे ? क्या तुम अपनी बेटी को दूसरे की कुछ भी मानकर विपरीत व्यवहार करना चाहोगे ? तुम अपने बैंक बलैन्स को अपना ही धन मानते हो या हमारा। और यदि अपना नहीं मानते तो हम अभी प्रबन्ध कर दें। इस संसार में श्वास लेने से ही तुम जीवत हो; इसको भी मानते हो या नहीं अथवा तुम्हारी नाक व मुंह बन्द करके दिखायें।

भाई साहब ! तनिक बुद्धि एवं विचार शक्ति से काम लो कि यदि तुम इन सबको अपना न मानकर औरों का ही मानने लगोगे तो तुम्हारी हालत ही खराब हो जायेगी। बन्धु याद रखो एकदम केवल कुछ सुन लेने पर मानने के हम भी पक्ष में नहीं परन्तु जब किसी बात को अथवा किसी सिद्धान्त को ठोक-पीटकर, विचारकर देख लिया हो कि यह सत्य है, इससे जीवन में लाभ ही है तो पुनः इसे जीवन में मानकर चलने से हानि नहीं, अपितु एक बहुत बड़ा लाभ ही है। और जो तुम केवल विचारने ही विचारने तथा देखने ही देखने की बात कहते हो सो तुम्हारे इस सारे के सारे विचारने और देखने का प्रयोजन क्या है ? यदि तुमने विचारने और देख लेने पर भी उस पर चलकर लाभ नहीं उठाना तो अपना अमूल्य समय खोकर इस अमूल्य जीवन को नष्ट ही करना है।

इतना ही नहीं, अब मैं आपको यह भी संकेत करना चाहता हूं कि आप जो अभी बिना सोचे विचारे ही किसी सिद्धान्त के मानने के पक्ष को लेकर बुरी तरह से बरस पड़े थे और उसकी नितान्त अवहेलना कर रहे थे, मैं अब उस पर कुछ और प्रकाश डालना चाहता हूं। भाई साहब आपने किसी सिद्धान्त के मानने से जो संसार की अवनति तथा उसका विभिन्न पाखण्डों में फंसकर मत-पन्थों से पीड़ित होना कहा है, क्या आप उसमें स्वयं तो नहीं फंसे हुए। नहीं विचारक महोदय ! हमारा किसी भी मत अथवा पन्थ से कोई सम्बन्ध नहीं। हम तो जहां स्वयं एक

Scanned with CamScanner

स्वतन्त्र विचारक हैं, वहां दूसरों को भी किसी विशेष मत अथवा विशेष पन्थ से मुक्त रहकर सदा स्वतन्त्र ही रहने का उपदेश देते हैं।

'ओ मेरे अभुद्त भाई ! आप अपने हृदय में झांककर देखो और ज़रा यह तो बताने का कष्ट करो कि आपने अपने गले में यह लम्बी चौड़ी माला क्यों डाल रखी है ? आप तो अभी कह रहे थे कि हम किसी को भी नहीं मानते परन्तु आपके गले में यह किस व्यक्ति का चित्र लटक रहा है। आपको देखकर हमें क्रोध भी आ रहा है और हंसी भी। क्रोध तो इसलिये आ रहा है कि आप जिस बात को स्वयं मानने से इन्कार कर रहे हो, उसी को ही अपनाकर अपने झूठे व्यवहार के द्वारा दुनियां को धोखा दे रहे हो और हंसी इसलिये आ रही है कि आप जैसे स्वभाव वाले लोगों की कभी भी किसी काल में कोई कमी नहीं रही तथा आपकी इस विचित्र अवस्था को देखकर मुझे उन तोतों की कहानी याद आ रही है। कौनसी कहानी, विचारक महोदय ?

एक आदमी को भिन्न-भिन्न प्रकार के तोते पालने का बड़ा शौक था। उसने नाना प्रकार के तोते अपने बाग में रखे हुए थे। तोते पालनेवाला अपने आपको एक बड़ा चतुर व्यक्ति समझता था। वह तोतों की बड़ी सेवा करता था और तोते भी उससे इतना प्रेम करते थे कि पिंजरे से उड़ जाने के पश्चात् भी फिर वापिस पिंजरे में उसके पास आ जाया करते थे। उस चतुर व्यक्ति ने एक दिन विचारा कि तोते अब दूर-दूर तक घूमने निकल जाते हैं। कहीं ऐसा न हो कि कोई तोते पकड़नेवाला शिकारी इस जंगल में आये और इनको दाने का लोभ देकर पकड़ कर ले जाये। जिससे कि मुझे सदा के लिये हाथ मलने पड़ें। उसने अपने तोतों को बचाने के लिये एक पाठ पढ़ाना शुरु किया।

वह प्रतिदिन प्रातः काल एक घण्टा तक उन तोतों को पाठ सिखाने लगा। आप तो जानते ही हैं कि तोता तथा मैना एक ऐसा पक्षी है कि जिसके सामने आप जैसा बोलेंगे, वह भी आपकी बात सुनकर वैसा ही बोलना शुरु कर देगा, उन तोतों के स्वामी ने बोलना शुरु किया–शिकारी आयेगा, तोते बोलते-शिकारी आयेगा, जाल बिछायेगा-जाल बिछायेगा, दाना डालेगा-दाना डालेगा, तुम्हें फंसायेगा-तुम्हें फंसायेगा फंसना मत सारे तोतेमिलकर बोलते फंसना मत। निरन्तर एक मास तक उस चतुर

व्यक्ति का यह पाठ चलता रहा और अन्त में जाकर सारे तोतों ने एक दिन सम्पूर्ण पाठ अपने मालिक को सुना दिया। उस मालिक की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। अपने आपको बहुत चतुर समझनेवाले व्यक्ति ने विचारा कि अब मेरे तोते इतने समझदार हो गये हैं कि अब इनको कोई व्यक्ति अपने जाल में फंसा नहीं सकता। चतुर मालिक ने पिंजरा खोला और फर से सारे पक्षी खुले आकाश में उड़ने लगे। उड़ते-उड़ते वे एक घोर घने जंगल में जा पहुँचे। उनको उड़ता देखकर वहां सुबह से शिकार की खोज में बैठे एक शिकारी ने लम्बी सांस ली। वह बड़ा प्रसन्न हुआ और चुपके से अपने स्थान से उठकर अपने द्वारा बिछाये गये जाल की डोरी के पास पहुंचा। ज्यों ही उसने अपने शिकार को देखने के लिये आकाश में आंख उठाई तो झट सारे तोते बोले उठे—शिकारी आयेगा, जाल बिछायेगा, दाना डालेगा, तुम्हे फंसायेगा पर फंसना मत। उस शिकारी ने तोतों की वह बात सुनी तो हैरान व उदास हो गया और विचारने लगा कि आज का दिन तो बेकार ही गया। इतने समझदार तोते मेरे जाल में बिल्कुल नहीं फंस सकते। खैर जो होगा देखा जायेगा। उसने जाल पर दाना डाल दिया और छुपकर जाल डोरी खींचने के लिये सजग हो गया। तोते अपना वही रटा हुआ पाठ बोलते जा रहे थे और जाल पर डाले हुये दाने को देखकर उस ओर बढ़ भी रहे थे। आखिर उन सब तोतो ने जाल पर दाना खाना शुरू किया। शिकारी ने झट से मौका देखा और जाल की डोरी खींच दी। डोरी का खींचना था कि सारे तोते जाल में फंस गये। पर शिकारी को हैरानी इस बात की थी कि वह अपना पाठ अब भी रट रहे थे। शिकारी समझ गया कि ये सारे निपट मूर्ख ही हैं। वह आगे बढ़ा और उन सब तोतों को जाल में लपेटकर अपने कंधे पर रखकर चलने लगा। तोते फिर भी वही पाठ रटते जा रहे थे। शिकारी आयेगा-जाल बिछायेगा-तुम्हे फंसायेगा-पर फंसना मत।

क्यों मेरे भाई! सिद्धान्तों से ऊपर और किसी भी मान्यता को न मानने वाले आप जैसे लोगों की दशा शायद इन जाल में फंसकर बोल रहे तोतों से अधिक अच्छी नहीं है। तुम भी कहने मात्र से तो यही कहते हो कि हमारा कोई सिद्धान्त नहीं, कोई मत नहीं, कोई पन्थ

आचार्य धर्मधीर आर्य
आर्य वीर दल महरौली